दर्शन और नीतिशास्त्र का क्या संबंध है ?

डॉ. वेदप्रकाश डोणगावकर
दर्शन विभागाध्यक्ष
मातोश्री शांताबाई गोटे महाविद्यालय, वाशिम

दर्शन यह एक विचार का शास्त्र है। और इस अर्थसे दर्शन के उदय का प्रश्न आपने आपमें अर्थहीन है। क्यो की दर्शन का उदय मनुष्य के उदयसे ही है। मनुष्य जैसे जैसे विकसित होते गया, वैसे वैसे दर्शन का भी विकास होते गया। आज दर्शन विकासके उस परमोच्च स्थानपर है, जहासे हमे विभिन्न शाखांओका ज्ञान होता है। सामान्यतः दर्शनमें सत्ताशास्त्रए, ज्ञानमीमांसा, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, सौंदर्यशास्त्र आदी प्रमुख शाखांओका उल्लेख किया जाता है। इन सभी शाखांओका कार्य और विस्तार आपने आपमे व्यापक है। जीसके चलजते दर्शनका स्वरुप और कार्य भी विस्तीर्न हो जाता है। और दर्शन की विभिन्न व्याख्याऐं बन जाती है। सत्ताशास्त्रके दृष्टीसे देखा जाए तो, ''विश्वके मूल विषयोंका अध्ययन करनेवाला शास्त्र दर्शन है।'' ज्ञानमीमांसाकी दृष्टीसे ''वस्तू, पदार्थ या विषयका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करनेवाला शास्त्र दर्शन है।'' तर्कशास्त्रके दृष्टीसे ''विचारोंको सही ढंगसे प्रस्तूत करनेवाला शास्त्र दर्शन है।''

यदी हम इन सभी शाखाओको गंभिरतासे देखते है तो यह स्पष्ट रुपसे दिखाई पडता है की, केवल नीतिशास्त्र ही एक ऐसा शास्त्र है जो मनुष्य के आचारण के मापदंड को दर्शाता है। जीसके चलते ''मनुष्यको आपने वैयक्तिक और सामाजिक जीवनमें व्यवहारके दृष्टीसे यथार्थ मार्गदर्शन करनेवाला शास्त्र दर्शन है।'' ऐसा हम कह सकते है। इससे यहभी प्रतित होता है की, दर्शन नीतिशास्त्र की पृष्ठभूमि है। विद्वानोंके मतानुसार ''श्रेष्ठ चिंतन के लिए नीतिशास्त्र दर्शनशास्त्र पर आधारित है और श्रेष्ठ आचरण के लिए दर्शनशास्त्र नीतिशास्त्र का ऋणी है।''[1] अर्थात दोनोमें घनिष्ठ संबंध है। किंतु वास्तव प्रश्न यह है की, दर्शन और नीतिशास्त्रमें इस प्रकारसे संबंध जोडना उचित होगा ? क्यो की, जब हम दर्शन के विभिन्न क्षेत्रोको देखते है तो उसका कार्य अत्यंत वैज्ञानिक है। जबकी नीतिशास्त्र व्यावहारिक है।[2] और व्यवहार रुढी, परंपरा, संस्कृती से युक्त है।

सत्ताशास्त्र के संदर्भसे हम दर्शन मे 'सत्य' (Matter) के ज्ञान को महत्व देते है। किंतू उसके लिए हम नीतिपूर्ण आचरण के आवश्यकता की शर्त रखते है। (उदा. अवधिज्ञान और मनपर्याय ज्ञानके लिए कर्मोका अंशीक नाश और रागद्वेषपर विजय)।[3] क्या संबंध है नैतिक आचरण और सत्य का ? मै एक इंसान को देखता हुं की, वह सारा जीवन 'सदाचार' युक्त व्यतीत करता है। फिर भी वह किसी सिद्धांत की स्थापना नही कर पाता। वह कहता है की, ''क्या करु बेफुजूल संघर्ष करके ? एक दिन जीवन छोडकर जाना ही है।'' तो उससे पुछा जाता है की, तो आप इसलिए सदाचारी बने रहते है ? तब वह इंसान कहता है की, ''मुझे कुछ हासील ही करना नही है, सो मै संघर्ष नही करता और आप लोग उसे ही 'सदाचार' कह देते हो। मेरा तो कोई उद्देश नही है।'' तात्पर्य, ''नैतिक आचरण यह केवल एक आरोपन है और कुछ नही।'' और दुसरी बात यह है की, मेरा यह विधान असंगत भी हो जाता है। तब भी नैतिक आचरण और दर्शन का कोई प्रत्यक्ष संबंध नही है। हम देखते है की रसेल नामक व्यक्तिने भाषाके संदर्भसे एक दार्शनिक सिद्धांत की स्थापना की है। अर्थात उसने सत्य की दृष्टीसे किसी बात की स्थापना की है। परंतु जब हम किसी भारतीय मुल्य संस्कृती के अनुसार या फिर स्पष्ट रुपसे कहा जाये तो नैतिक व्यवहार के अनुसार उस रसेल महाशय का आचरण देखते है तो, वह सदाचारी नही लगता। किंतू इससे रसेल को आइडियास का, या फिर किसी अन्य दार्शनिक तत्त्वोंका ज्ञान न हुआ हो ऐसा भी हम नही कह सकते। एक उदाहारण हम सिकंदर का देख सकते है। सिकंदर माहाण तो ॲरिस्टॉटल का प्रत्यक्ष विद्यार्थी था। निश्चितरुपसे उसने दार्शनिक विषयोंके साथ साथ नैतिक विषयोंका भी अभ्यास किया ही होगा। किंतु उसका आचरण कैसे रहा ? उसने हजारोंकी 'हिंसा' की। उसमे विश्व सम्राट बनने की 'असक्ती' भर पडी थी। इसके बावजूद आजके इस दौर मे दर्शन का उत्तम अध्यापन करनेवाले अध्यापकों के आचरण मे आगर कोई झाककर देखता है, तो वहा विसंगती का दर्शन होगा, वहा भी करनी और कथनी में अंतर दिखाई देगा। तात्पर्य दार्शनिक

ज्ञान के लिए नैतिक आचरण की शर्त अर्थहीन है। या फिर नीतिशास्त्र का अभ्यासक नैतिक होता है। यह कहना भी अर्थहीन होगा।

सवाल यह रह जाता है की, दर्शन और नीतिशास्त्र का संबंध क्या है ? और इन संबंधो का भविष्य क्या है ? तो हम कह सकते है की, इस संसार में असंबंध कोई विषय है ही नही । बस किसी का संबंध प्रत्यक्ष है तो किसी का अप्रत्यक्ष। दर्शन और नीतिशास्त्र का संबंध भी अप्रत्यक्ष है, प्रत्यक्ष नही है। आज इस संबंध को प्रत्यक्ष की दृष्टीसे देखा जाता है। किंतू भविष्य इसके विपरीत हो सकता है। क्यो की हम देखते आये है की, प्रत्येक रुढी, परंपरा और संस्कृती आपने आपमे तत्कालिन समाज की मांग होती है। और प्रत्येक मांग उस समाज के स्वार्थ की उपज होती है। आजके और आनेवाले कल के समाज का स्वार्थ वैश्विक न होने के बजाय सिमीत होते जा रहा है। यही सिमीतता एक सिद्धांत बनते जा रहा है। किंतू यह बनना स्वभाविक है। और उस स्वाभाविकता को पहचानना ही 'सत्य' का ज्ञान है। अर्थात दर्शन है। जीसके लिए नैतिक आचरण की कोई आवश्यकता नही है। क्यो की वास्तवमें दर्शन यह एक बौद्धीक विधी या अकलन भी है।

जहा तक हमारा निरिक्षण है, तो प्रत्येक रुढी, परंपरा और संस्कृती आपने आपमें सापेक्ष है। इस अर्थसे इन सब बातोंका अध्ययन करनेवाला शास्त्र भी आपने आपमें सापेक्ष है। यदी हम नीतिशास्त्र को रुढी, परंपरा और संस्कृती के संदर्भ से नैतिक निर्णय देनेवाला शास्त्र मानते है, तब भी नीतिशास्त्र का स्वरुप सापेक्ष प्रतित होता है। वास्तव में ''नीतिशास्त्र नीतिनिर्णय, मुल्य आदी का परिचय करवाते हुये उसपर चलने की अपेक्षा रखनेवाला शास्त्र है।'' उसमे उचित–अनुचित, शुभ–अशुभ, पुरुषार्थ, ऋण, निष्काम कर्म, स्वधर्म, त्रिरत्न, महाव्रत, आष्टांग मार्ग, सुखवाद आदी संकल्पनांओका परिचय करवाते हुये उसपर चलने की, अपेक्षा की जाती है। किंतु क्या वाकई मे हमारा व्यवहार हमे इन सभी नैतिक आवधारनाओंको आदर्श मानकर उनपर चलने की प्रेरणा या अनुमती देता है ? 'नही' हमारा व्यवहार हमे इस बात की प्रेरणा या अनुमती नही देता। हम शुभ के संदर्भसे जब सोचते है तो हमारी अपेक्षा होती है की, समस्त मानुष्य जाती केवल एक भावना या एक विचार से चले। प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्ति के भावना और विचारोंका सन्मान करे। किंतू क्या ऐसा होता है ? 'नहीना' तो क्यो हम अपेक्षा करते है इस प्रकार के नीतिपूर्ण आचरण की ?

यदी हम इन उपरोक्त मुल्य, आवधारनाओं को एक संहीता के रुपमे देखत है, तब भी नीतिशास्त्र आपने आपमें विसंगत या कमजोर या फिर अच्छेपण की नौटंकी है। क्यो की उनमे कोई सामान्यत्व (Universal) नही है। उदाहारण के रुपमे हम महाव्रत और अनुव्रत को देख सकते है। यदी एक दार्शन के अनुसार शरिर, मन और शब्दसे किसीको दुखाना हिंसा है। तो अन्य दर्शन के अनुसार 'शत्रू' को मारना, किस प्रकारसे हिंसा नही होती ? और इस प्रकार की हिंसा नैतिक है तो ''आपने शत्रूपर भी प्रेम करो''[4], ''ब्रह्मविहार'' आदी का क्या तात्पर्य है ? इस प्रकार के कही सारे सवाल नीतिशास्त्र के संदर्भमे उपस्थित किए जा सकते है। और उन सारे सवालोंके अनुसार कहा जा सकतो है की, नीतिशास्त्र आपने आपमें विसंगत है। जीसके चलते नीतिशास्त्रपर से समाज का विश्वास उडते जा रहा है।

फिर समाज मे नैतिकता या सदाचार युक्त आचरण होना चाहीए या नही ? और उसके लिए क्या किया जा सकता है ? जी हां निश्चितरुपसे ना केवल आजके बलकी आनेवाले प्रत्येक समाज को नैतिकता या सदाचार युक्त आचरण की आवश्यकता है। किंतू उसके लिए समाज को केवल बौद्धीक बनाने की, चिंतणशील बनाने की आवशकता है। ना की उसे धर्म या धार्मिक आधार देते हुए भावनिक बनाने की। इस संदर्भसे यदी हम हमारे पारंपारिक नीतिशास्त्र का परीक्षण करते है तो, यहा कर्मफल का संबंध पाप–पुण्य से जोडा जाता है। इसके बावजूद यहा हमारे प्रत्येक कर्म का ध्येय मोक्ष, कैवल्य या निर्वाण को माना जाता है। जो की पुर्णतः काल्पनिक या केवल मनोरंजनात्मक है। वास्तव मे आज आवशक है की, प्रत्येक व्यक्ति आपने स्वतःके विवेक के आधार पर वैयक्तिक, सामाजिक और वैश्विक विषयोंको महत्व दे। जीसके चलते नैतिक मुल्योंका या विषयोंका केवल अर्थ स्पष्ट करना पर्याप्त है। ना की उसपर चलने की आपेक्षा करना।

संदर्भ :–

[1] भारतीय नीतिशास्त्र, डॉ.जय प्रकाश शाक्य, अशोक प्रकाशन, आगरा, 2011, पृ. 26

[2] वही, पृ. 27

[3] भारतीय दर्शन, शोभा निगम, मातीलाल बनारसीदास, पुणे, 2008 पृ. 77

[4] मध्ययुगीन पाश्चात्य तत्त्वज्ञान, डॉ.वेदप्रकाश डोणगावकर, निर्मल प्रकाशन नांदेड, 2015 पृ. 109